Volume-1, No.2 Aug.-2014, pp.93-95

सन्त कबीर का मानवतावादी धर्म

डॉ. नितिश दुबे, एसोसिएट प्रोफेसर एवं अध्यक्ष, दर्शनशास्त्र विभाग,
डी.ए.वी. कॉलेज, कानपुर उ.प्र. भारत।

भक्ति आन्दोलन मध्यकालीन इतिहास की प्रमुख धटना है। रामानन्द ने भक्ति को सर्व साधारण तक पहुँचाने के लिए अभूतपूर्व योगदान दिया। उनके बाद सन्त कबीर ने उन्हीं की परम्परा को आगे बढ़ाया। रामानन्द ने भक्ति को एकान्तिक साधना माना तथा उसे सभी मनुष्यों के लिए सुलभ बनाया तथा सन्त कबीर ने भक्ति को सभी मनुष्यों के लिए सुलभ बनाने के लिए उसे शास्त्रों के बंधन से मुक्त किया। उनके अनुसार शास्त्र तथा सम्प्रदाय भक्ति पथ की प्रमुख बाधाये हैं। शास्त्र तथा सम्प्रदाय के रहते हुए मनुष्यों के बीच पारस्परिक प्रेम कभी भी पनप नहीं सकता। **''कबीर सहज में आस्था रखने वाले मानववादी व्यक्ति थे। इस्लाम को स्वीकार करने पर भी मजहबी कट्टरता से वह कोसों दूर थे। उनका कोई लगाव किसी रूढ़ अन्ध मर्यादा में नहीं था।''**

सन्त कबीर ने मनुष्यों को दैहिक, दैविक तथा भौतिक तत्वों से मुक्त करने का प्रयत्न किया। उनका धर्म मानवतावादी धर्म है। कबीर के अनुसार मानव मात्र का कल्याण करने में वर्ण, धर्म, कुल, सम्प्रदाय आदि बाधक बनते हैं। अतः मानवतावादी धर्म उपरोक्त बाधाओं से मुक्त होना चाहिए। यही कारण है कि कबीर ने रूढ़िवादिता तथा बाह्याडम्बर का खुलकर विरोध किया। वह सभी प्राणियों को ईश्वर ही मानते थे। जीव तथा ब्रह्म की एकता के सम्बन्ध में कबीर का मत शंकराचार्य से साम्य रखता है। आचार्य शंकर जीव तथा ब्रह्म में साम्य स्थापित करने के लिए **''तत्त्वमसि''** महावाक्य की व्याख्या करते हैं। इस महावाक्य का स्पष्ट अर्थ है कि 'त्वम्– (जीव) तत् (ब्रह्म) है, अर्थात् ब्रह्म तथा जीव में एकत्व है। जीव तथा ब्रह्म का अभेद ही अद्वैत वेदान्त की मुख्य शिक्षा है। जीव तथा ब्रह्म की एकता के सम्बन्ध में सन्त कबीर कहते हैं कि आत्मा और परमात्मा एक ही है–

कबीर यहु तौ एक है, पड़दा दीया भेष।
भरम करम सब दूरि करि, सबही मांहि अलेष।।''

अर्थात् आत्मा तथा परमात्मा एक ही है। माया के आवरण के कारण ही संसार में जीव और ब्रह्म की सत्ता अलग–अलग प्रतिभासित हो रही है। द्वैत का मुख्य कारण माया का आवरण ही है। 'हे! जीवात्मा' तू संसार संशय एवं उससे परिचालित कर्मों को त्याग दे तो तुझे सर्वत्र वह निराकार प्रभु ही दिखायी देगा।

सन्त कबीर ने शंकराचार्य के समान जीव को आत्मा माना है। कबीर ने जीव को सदैव एक तथा अद्वैत रूप कहा है– ''बृहदारण्यकोपनिषद्'' में भी जीव को एक तथा अद्वैत रूप कहा गया है। कबीर ने मानव कल्याण तथा प्रेम का प्रसार करने के उद्देश्य से ही जीव तथा ब्रह्म में एकत्व की स्थापना की। सामाजिक समरसता की स्थापना तथा लौकिक तथा पारलौकिक लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए उन्होंने सन्तों के लक्षण भी प्रस्तुत किए है, क्योंकि आदर्श समाज के निर्माण के लिए पथ प्रदर्शक भी आडम्बरों से मुक्त सभी जीवों से प्रेम करने वाला तथा सम्प्रदाय से मुक्त होना चाहिए। सन्त कबीर के सन्देशों द्वारा भक्ति में समरसता का समावेश दिखाई देता है। वह एक प्रगतिशील चिन्तक थे। वह लोक तथा वेद का खण्डन करते हुए केवल ज्ञान को ही प्रमुख मानते थे।

कबीर ने धर्म का विरोध नहीं किया वरन् धर्म में व्याप्त बुराइयों का विरोध किया जो समाज को दूषित कर रही थी। इस कारण उन्हें समाज का कड़ा विरोध झेलना पड़ा लोग उन्हें विद्रोही, क्रान्तिकारी, अक्खड़ तथा आक्रामक कहते थे, किन्तु उनके भीतर केवल क्रान्तिकारी भाव ही नहीं थे बल्कि उनके भीतर एक भक्त भी था। वह स्वयं को ईश्वर का दास भी कहते थे–

''सुखिया सब संसार है, खावै और सोवे।
दुखिया दास कबीर है, जागे और रोवे।।''

सन्त कबीर ने मानववादी धर्म की स्थापना करने के लिए ही धर्म पर व्यंग्य किया। मध्यकालीन समाज के मनुष्यों में ऊँच–नीच, छुआ–छूत, जाति–पांति आदि का भेद व्याप्त था। इन्हीं कुप्रथाओं के कारण मनुष्यों में वैमनस्यता का भाव था। कबीर ने इस प्रकार के समाज को देखा तथा परखा। यही कारण है कि उन्होंने अपने मानववादी धर्म में किसी भी धार्मिक सम्प्रदाय का समर्थन नहीं किया, किन्तु वह सभी धर्मों का विरोध भी नहीं करते क्योंकि कोई भी धर्म हिंसा या अत्याचार करने की शिक्षा नहीं देता है। हम किसी भी धर्म के मूल में जाकर देखें तो हमें उसमें पारस्परिक विरोध नहीं दिखेगा। प्रत्येक धर्म में प्रेम, करुणा, त्याग, बलिदान, सेवाभाव सभी का समर्थन किया गया है। यहाँ पर सन्त कबीर के

विचार स्वामी विवेकानन्द के विचारों से साम्य रखते हैं। विवेकानन्द के अनुसार हमें सभी धर्मों की अच्छाइयों को ही ग्रहण करना चाहिए तथा एक सार्वभौम धर्म का निर्माण करना चाहिए। स्वामी विवेकानन्द के अनुसार धर्मों के बीच होने वाला आपसी संघर्ष केवल ऊपरी संघर्ष है। **''भँवर गतिशील नदी की धारा में ही होते हैं बंधे रूके, स्थिर जलाशय में नहीं। यदि हर कोई एक ही विचार सोचे तो वस्तुतः सोचने को कुछ नहीं रह जाता। अतः विवेकानन्द का कहना है कि धर्मों की विभिन्नता तथा उनका आपसी मतभेद एवं विवाद धर्मों के जीवन के लिए अनिवार्य है।''**

स्वामी विवेकानन्द के अनुसार सार्वभौम धर्म का प्रमुख लक्षण यह है कि इसका द्वार सभी के लिए खुला रहे तथा सार्वभौम धर्म ऐसा होना चाहिए जो सभी धर्मों को संतुष्ट कर सके। विवेकानन्द ने भी कबीर के समान धर्म का विरोध नहीं किया है बल्कि धर्म के बाह्य रूप का विरोध किया है। ये बाह्य रूप धर्म के स्वरूप को विकृत कर रहे हैं। ये बाह्य रूप ही उसके मिथ्याडम्बर है। हम किसी भी धर्म के सभी पहलुओं का अध्ययन करें तो पाएँगे कि विश्व के सभी धर्मों में कोई मौलिक विरोध नहीं है। विरोध तो तब उत्पन्न होता है जब कोई भी धर्मावलम्बी अपने धर्म को ही सत्य समझता है तथा अन्य धर्मों की उपेक्षा करता है। अतः समाज में प्रेम तथा सौहार्द्र स्थापित करने के लिए सभी को एक दूसरे के धर्म को आदर की दृष्टि से देखना चहिए क्योंकि सत्य केवल एक ही है और सभी अपने–अपने मार्ग से सत्य तक पहुँचने का प्रयत्न कर रहे हैं। अतः पारस्परिक विरोध का प्रश्न ही नहीं उठता है। सभी का लक्ष्य एक ही परम सत् है। इस प्रकार सार्वभौम धर्म के माध्यम से विवेकानन्द ने समाज में मानव कल्याण का मार्ग प्रशस्त किया।

सन्त कबीर पढ़े लिखे नहीं थे किन्तु फिर भी वह समाज को सही दिशा में ले जाने में सफल रहे। कबीर के विषय में त्रिगुणायत जी का कहना है कि– **''उन्होंने देश में, समाज में, दर्शन में, साधना में, सभी क्षेत्रों में क्रान्ति की जो धारा बहाई थी उससे निश्चय ही कालुष्य बह गये थे।''** उन्होंने मध्यकाल में अज्ञान रूपी अंधकार से घिरी हुई जनता पर उपकार किया। मिथ्याचारों का विरोध किया। उस समय समाज वर्ण व्यवस्था में विभक्त था। निम्न जाति को मन्दिर में जाना वर्जित था। कबीर ने सभी मनुष्यों की समानता पर बल दिया तथा प्रत्येक व्यक्ति को भक्ति का अधिकारी बताया। वह एक समाज सुधारक, सर्व धर्म समन्वयकारी तथा हिन्दू मुस्लिम एकता के समर्थक थे।

सन्त कबीर मध्यकालीन अव्यवस्थित तथा विश्रृंखल समाज को देख नहीं सके तथा उन्होंने इसका विरोध करके समाज को एक सही दिशा में ले जाने का मार्ग प्रशस्त किया। उनके धार्मिक विश्वास केवल सत्य पर ही आधारित हैं, उन्हें अंध विश्वास से घृणा थी, क्योंकि उस समय लोग धर्म का पालन भय से करते थे। हृदय से नहीं। उनके अनुसार धर्म में जप, तप, पूजा पाठ सब व्यर्थ है। यही कारण है कि उन्होंने इसका विरोध किया। उन्हें धर्म में जहाँ–जहाँ मिथ्याचार दिखायी दिये उसका खण्डन किया। कबीर ने किसी एक विशेष वर्ग के मिथ्याचारों का विरोध नहीं किया बल्कि हिन्दू तथा मुसलमान दोनों के मिथ्याचारों का विरोध किया। वह हिन्दुओं के जप, तप, माला फेरना, तीर्थ, व्रत, तिलक आदि का खण्डन करते थे तथा मुसलमानों के नमाज, रोजा आदि का भी विरोध करते थे। उनके अनुसार–

''इनके काजी मुल्ला पीर पैकंबर रोजा पछिम निवाजा।
इनके पूरब दिसा देव दिज पूजा ग्यारसि गंगा दिवाजा।
तुरक मसीति देहुरौ हिन्दू दहूँठा रांम खुदाई।
जहा मसीति देहुरा नांही तहां काकी ठकुराई।।''

वह हिन्दुओं के मन्दिर तथा मुसलमानों के मस्जिद में प्रार्थना करने को आडम्बर कहते थे। उनके अनुसार हिन्दू तथा मुसलमानों ने ईश्वर के रहने का स्थान सीमित कर दिया है। क्या मंदिर मस्जिद के अतिरिक्त ईश्वर या खुदा की सत्ता नहीं है? सन्त कबीर के अनुसार उस निराकार ईश्वर जिसका न कोई रूप है न वर्ण है उसका पण्डित या ज्ञानी क्या विचार कर सकते हैं? कबीर के अनुसार–

''सो कछु विचारहूँ पण्डित लोई।
जाके रूप न रेख वरण नहीं कोई।।''

कबीर ने साम्प्रदायिक मान्यताओं जैसे तीर्थ यात्रा आदि का विरोध भी किया है उनके अनुसार परमात्मा की प्राप्ति तो घर में भी हो सकती है। चाहे किसी भी तीर्थ स्थल चले जाओ साधु संगति तथा प्रभु भक्ति के बिना कुछ भी प्राप्त नहीं हो सकता।

साध संगति हरि भगति बिन, कछु न आवै हाथ।''

कबीर के अनुसार हिन्दू तथा मुसलमान अपने–अपने ईश्वर को अलग–अलग मानते हैं किन्तु ईश्वर तो घट–घट में समाया हुआ तथा एक है–

''मुसलमान कहै एक खुदाई कबीर को स्वामी घटि–घटि रह्यौ समाई।''

सन्त कबीर रामनाम को ही सच्चा मंत्र कहते हैं। अतः राम सभी साम्प्रदायिक भावनाओं से मुक्त हैं। उन्होंने धार्मिक कर्मकाण्ड के रूप में प्रयुक्त पशु बलि का विरोध किया। उनके अनुसार सभी जीव ईश्वर को प्रिय है यह निर्मम हत्याएँ करके तुम कैसे मुक्त होंगे? कबीर ने माला फेरने में भी आडम्बर देखा तथा उसका भी

खुलकर विरोध किया। कबीर के अनुसार काष्ठ की जड़ माला तुझे समझाती है कि मुझे फिराने से क्या लाभ? अपना मन संसार की ओर से फिराकर प्रभु भक्ति की ओर क्यों नहीं करता?

"कबीर माला काउ की, कहि समझावे तोहि।
मन न फिरावे आपणा, कहा फिरावे मोहि।।"

सन्त कबीर ने मूर्ति पूजा में भी आडम्बर देखा तथा उसका विरोध करते हुए कहा है कि सजीव द्वारा निर्जीव की पूजा की जाती है। पूजा में जो भी खाने की सामग्री चढ़ाई जाती है वह तो पुजारी खा जाता है। अतः उन्होंने मानव कल्याण के लिए उन सभी का विरोध किया जिसमें उन्होंने आडम्बर विरोध आदि का भाव देखा। उन्होंने आदर्श समाज के निर्माण के लिए धर्म का नहीं बल्कि धर्म की बुराइयों का विरोध किया क्योंकि धर्म के बाह्य रूप के कारण ही समाज में घृण तथा विरोध का भाव फैला हुआ था। पारस्परिक प्रेम तथा सौहार्द लाने के लिए ही उन्होंने धर्म से आडम्बर हटाकर उसे परिशुद्ध करने का प्रयत्न किया ताकि वह सभी मनुष्यों कें लिए ग्रहणीय हो। कबीर ने धर्म का ऐसा रूप प्रस्तुत करने का प्रयत्न किया है जिसमें कोई मनुष्य किसी अन्य धर्म का विरोध न कर सके। उन्होंने धर्म की वह सभी बुराइयाँ हटाने का प्रयत्न किया जिनके कारण धर्मों में वैचारिक मतभेद उत्पन्न होते हैं। उनके इस प्रकार के विचारों से धर्म का एक नया रूप प्रस्तुत होता है जो लोक कल्याणकारी है। यह मानव के हित में है अतः हम इसे मानववादी धर्म भी कह सकते हैं।

निष्कर्षतः

हम यह कह सकते हैं कि कबीर के विचार भले ही कट्टरवादी हिन्दू तथा मुसलमानों को अच्छे न लगें किन्तु फिर भी उनके विचार समाज को बुराइयों से दूर करके एक आदर्श समाज की ओर अग्रसर करते हैं। यही कारण है कि उन्हें समाज सुधारक भी कहा जाता है। वह पढ़े–लिखे नहीं थे किन्तु उनका व्यावहारिक ज्ञान अत्यधिक समृद्ध था क्योंकि उन्होंने शास्त्रों से ज्ञान अर्जित नहीं किया बल्कि समाज के भीतर रहकर उसे निकट से देखा तथा समझा। उन्होंने जो भी किया वह लोक हित में किया। वह मध्य युग के लिए एक देवता के समान थे जिसने लोगों के कल्याण के लिए समाज की उपेक्षा भी सही किन्तु अपने मार्ग से पीछे नहीं हटे तथा डटकर अपना पक्ष रखा। उनका समानता का विचार आज भी प्रासंगिक है क्योंकि आज भी समाज में सभी को समानता का अधिकार पूर्ण
रूप से प्राप्त नहीं है। यदि कबीर के विचारों के आधार पर समाज का निर्माण किया जाय तो समाज से सभी प्रकार की बुराइयों का नाश हो सकता है। उनके विचारों के माध्यम से समाज में प्रेम, एकता, सौहार्द, समानता आदि की स्थापना की जा सकती है। उनके द्वारा प्रतिपादित धर्म का विचार एक मानवतावादी धर्म का आदर्श प्रस्तुत करता है जो भूत, वर्तमान तथा भविष्य तीनों कालों के लिए प्रासंगिक है।

सन्दर्भ ग्रंथ सूचीः–

1. स्नातक विजयेन्द्र–कबीर, पृ0 244
2. छान्दोग्योपनिषद्– 6/8/7
3. कबीर ग्रन्थावली– पद–18, पृ0 192
4. वृहदारण्यकोपनिषद्– 4/3/9, 14
5. कबीर ग्रन्थावली–विरह कौ अंग– 45/112
6. स्वामी विवेकानन्द– ज्ञान योग, पृ0 379
7. कबीर ग्रन्थावली– पृ0 51
8. कबीर ग्रन्थावली– पद–58
9. कबीर ग्रन्थावली– पद–37
10. कबीर ग्रन्थावली–साध को अंग पद 3
11. कबीर ग्रन्थावली– पद 330
12. कबीर ग्रन्थावली–साध को अंग पद 5